मुश्किल वक्त से सीखना

– सुनील बिष्ट

लॉकडाउन के दौरान की परिस्थितियां मुश्किल जरूर रहीं लेकिन सीखने और एक नए नजरिये को विकसित करने में सहायक भी रहीं। ये अनुभव और दृष्टिकोण आगे आने वाले समय में सहायक साबित होंगे।

मार्च का महीना था। होली के बाद सभी लोग फिर से काम में जुट गए थे। वर्तमान और भविष्य के तयशुदा लक्ष्यों की ओर हमारा ध्यान केन्द्रित था। वैसे भी मार्च का महीना बहुत उत्साह वाला होता है, क्योंकि इसके आने वाले महीने से स्कूल की बहुत सी प्रक्रियाओं में बदलाव होते है, आप एक नए सत्र में प्रवेश कर रहे होते हैं, बच्चों को नई कक्षा में प्रवेश की खुशी और उत्साह होता है साथ ही शिक्षकों को भी नई कक्षाओं और नए कामों की जिम्मेदारी से नयेपन का अहसास होता है। उत्साह तो बहुत होता है। मन में कई विचार और रणनीतियां बनती बिगड़ती रहती हैं। इस साल क्या नया करके देखा जाए और किन–किन क्षेत्रों में और ध्यान देने और सीखने की जरूरत है। कैसे और किसकी मदद से ये काम आसान किये जा सकते हैं, और बेहतरी के लिए... लेकिन इस बार प्रकृति को शायद कुछ और ही मंजूर था। हालांकि,

पिछले कुछ महीनों से हम टी.वी. न्यूज, समाचार–पत्रों, सोशल मीडिया आदि माध्यमों से लगातार दूसरे देशों में बढ़ रहे संक्रमण के प्रकोप की खबरें सुन रहे थे। लेकिन इसको लेकर इतने गंभीर न थे और ऐसी भयावह स्थिति की कल्पना भी नहीं की थी। शायद जीवन में इससे पहले इस तरह की किसी इतनी बड़ी घटना से दो–चार नहीं हुए थे। कभी–कभार कक्षा में बच्चे भी इस तरह की खबरों का जिक्र करते तो उनसे इस पर बातचीत हो जाती। बच्चों से आ रही कई प्रतिक्रियाओं को सुनने से एक बात समझ आ रही थी कि कई तरह की भ्रामक जानकारियां और डर लोगों में बैठाया जाता है। कई ऐसी खबरें होती हैं जिनकी प्रमाणिकता पर कोई भी समझदार इंसान सवाल कर सकता है। लेकिन समाज में जागरूकता और तार्किकता की कमी के कारण लोग ऐसी खबरों और बातों की जद में बहुत जल्दी आ जाते हैं।

समय के साथ अब कई देशों की स्थितियां बद से बदतर होती जा रही थीं। मार्च के तीसरे सप्ताह, 17 या 18 के आस–पास हमने भी सरकार द्वारा निर्धारित फैसले के अनुसार स्कूल को बंद करने का निर्णय लिया।

सरकार ने शुरुआती 14 दिनों का पूर्ण लॉकडाउन करने का निर्णय लिया। यह एक अजीब सी स्थिति थी, हम सभी इस तरह की स्थिति का सामना पहली बार ही कर रहे थे। अचानक लॉकडाउन के फैसले से आस–पास के लोगों में डर का पैदा होना लाज़िमी था। अस्पष्ट सूचनाओं और किसी भी चीज में अनिश्चितता के कारण डर का प्रभाव बढ़ता जा रहा था. सभी को घरों पर रहने के निर्देश दिए जा रहे थे। घरों से बाहर निकलने पर पूर्ण पाबंदी थी। स्वयं को घरों में बंद रख पाना और नियमित दिनचर्या और भागदौड़ के कामों से हटकर कमरों में सिमटकर रह जाना। यह एक कठिन स्थिति थी।

स्कूल बंद हो चुके थे। हमने अपने कामों को घर से करने का फैसला लिया और फोन या अन्य माध्यमों के जरिये एक दूसरे से सम्पर्क में रहने लगे। साथ ही हम अपने समुदाय में बच्चों और उनके अभिभावकों के साथ फोन के

जरिये लगातार सम्पर्क में थे। उनकी और पारिवारिक स्थितियों का जायजा ले रहे थे। उन्हें ऐसे समय में धैर्य और शांत रहने का हौसला दे रहे थे। समुदाय में स्कूल की भूमिका की दृष्टि से समुदाय के लोगों की यथासम्भव मदद करना और उनको जागरूक करने के लिए हम प्रयासरत थे। समुदाय में एक बड़ा वर्ग दैनिक मेहनत–मजदूरी के सहारे जीवन–यापन करने वाला है, ऐसे में रोजी–रोटी की चिंता करना स्वाभाविक बात है। हम उनसे किसी भी प्रकार की सहायता की जरूरत के लिए बात करने को कहते।

स्कूल परिवार और घर से काम

हम सभी स्कूल के साथी ऐसे मुश्किल समय में एक दूसरे से लगातार बातचीत कर एक–दूसरे को मजबूत और सकारात्मक बने रहने की बात करते। सभी लोग एक अजीब सी मनःस्थिति से जूझ रहे थे। यह ऐसी परिस्थिति थी जिसमें खुद को मानसिक, शारीरिक और भावनात्मक रूप से स्थिर और स्वस्थ बनाए रखना बहुत जरूरी था। अधिकांश लोग तनाव और डर की स्थिति में थे। आशा और अनिश्चितता दोनों साथ में थे– नहीं पता कि आगे स्थितियां क्या होगी और जीवन कैसा होगा? और इस बात की खोखली आशा कि आगे सब कुछ ठीक हो जाएगा। एक टीम के रूप में हमारी सबसे अच्छी बात यह थी कि हम एक–दूसरे के प्रति पहले की अपेक्षा और अधिक संवेदनशीलता के साथ थे और एक दूसरे के साथ हमारी बातचीत बढ़ गई थी। किसी भी परिस्थिति से निपटने के लिए हम सब साथ थे। स्वयं के अन्दर डर होते हुए भी हम अपने साथियों को और हिम्मत देने, उन्हें हंसने–मुस्कराने और तनाव से से मुक्त रखने की कोशिश करते। इसी के साथ हमने अपने पढ़ने–लिखने और अन्य कामों को भी करना जारी रखा, और कुछ दिनों के अंतराल में एक दूसरे से जुड़ते और अपने काम व अनुभवों को एक दूसरे से साझा करते। स्वयं के सीखने के लिए हम कुछ न कुछ काम घर पर रहकर कर रहे थे। इस बीच अपने को दृढ़ और सीखने में बनाए रखने के लिए हम लगातार नए–नए तरीके निकाल रह थे, जैसे हमने अब English speaking के session शुरू कर दिए, साथ ही कहानियां पढ़ना और सुनाना आदि काम हमने शुरू किये थे। वाट्सएप समूह में साथियों के साथ प्रतिदिन कोई न कोई साथी कुछ विषयों पर छोटे वीडियो बनाकर साझा करता जैसे– भेदभाव के मुद्दे, बचपन की समझ, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, किशोरावस्था आदि विषयों पर स्वयं की समझ। साथ ही सोशल मीडिया के माध्यम से लोगों को जागरूक करने के उद्देश्य से पोस्ट करना शुरू किया। क्योंकि कई सोशल मीडिया माध्यमों के जरिये भी कई फेक न्यूज और भ्रामक सूचनाएं फैलाई जा रही थी। साथ ही कई जगहों पर समुदाय में धार्मिक संगठनों द्वारा तरह–तरह के टोटके, पूजा–अनुष्ठान आदि अंधविश्वास बड़ी मात्रा में फैलाया जा रहा था। जैसे, बड़े स्तर पर कोई पूजा या धार्मिक अनुष्ठान संपन्न करवाया जाना जबकि दूसरी ओर सरकार और विशेषज्ञ शारीरिक–दूरी बनाए रखने की बात कर रहे थे। अपने बच्चों ने बताया कि उनके घरों में सुबह तड़के तीन बजे उठकर घर की देहली पर पूजा दी गई, जिसके पीछे तर्क यह दिया गया कि इससे वायरस उनके घर में नहीं आएगा और उनका परिवार सुरक्षित रहेगा। मैंने जब ऐसे बच्चों से बात की तो उन्होंने बताया कि उन्हें किसी का फोन आया और जिनसे उन्हें पता चला उन्हें भी किसी का फोन आया, लेकिन ऐसी खबरों में नहीं पता चलता कि यह शुरू कहां से हुआ है। ऐसा ही यहां भी था। ऐसे में किसी को नहीं पता कि वास्तव में ऐसा करने की सलाह किसने दी। समाज में यही होता है, कोई भी अफवाह एक सिरे से दूसरे सिरे तक पहुंच जाती है और लोग बिना पड़ताल किये उन्हें कर लेते हैं और ऐसी आपदा के समय तो जबकि कहीं कोई रास्ता नहीं दिख रहा हो तो लोग सबसे पहले धार्मिक संगठनों और गुरुओं का सहारा लेते हैं। खैर, हमने स्कूल के फेसबुक पेज के माध्यम से लोगों को जागरूक करना शुरू कर दिया कि लोग सोशल–मीडिया माध्यमों द्वारा फैलाई जा रही जानकारियों और झूठ पर विश्वास न करें। एक बात समझ में आई कि ऐसे मुश्किल समय में स्कूल का कितना अहम रोल होता है जब वे बच्चों और समुदाय का कई भ्रांतियों और गलत जानकारियों से बचाव करें और उन्हें सही दिशा में गाइड करें जागरूक करें।

समुदाय और बच्चों के साथ काम

समुदाय में बच्चों की पढ़ाई जारी रखने के लिए शुरुआत में बच्चों के साथ वाट्सएप के जरिये काम शुरू किया।

इसे शुरुआती कुछ हफ्तों तक किया गया। लेकिन यह अधिक सफल होता नहीं दिख रहा था। इसकी कई सारी वास्तविक चुनौतियां थीं जो हमें धीरे–धीरे बच्चों से बात करके समझ आने लगे। उदाहरण के तौर पर, कई सारे बच्चों के घर में स्मार्टफोन नहीं होना, अगर स्मार्टफोन है तो इंटरनेट पैकेज न होना। हमने इस पर भी सोचा कि बच्चों के फोन को रिचार्ज करेंगे ताकि वे काम को अच्छे से कर सकें। कई बच्चों ने अपने आस–पास के लोगों एवं रिश्तेदारों के फोन का उपयोग भी किया। बच्चे लगातार पूछते कि स्कूल कब खुलेगा? वे अब फिर से स्कूल कब से आ सकेंगे, उनका मन घर में नहीं लगता। बच्चों से लगातार बातचीत के बाद कुछ और बातें समझ आने लगी थी– जैसे जिन परिवारों में तीन से चार भाई–बहन पढ़ने–लिखने वाले थे उनके लिए एक ही फोन से सामंजस्य कर काम करना थोड़ा मुश्किल हो रहा था, कुछ बड़ी कक्षाओं के बच्चों ने परिवार पर यह दबाव बनाने कि कोशिश की कि उन्हें नया फोन चाहिए ताकि वे स्कूल द्वारा दिया जाने वाला काम कर सकें। यह सोचने वाली बात है कि आज भी इस तकनीकी के दौर में हमारे देश की हालत क्या है? हम ऐसे समय के लिए बिल्कुल भी तैयार नहीं हैं जिसमें हमारे देश के हर वर्ग तक किसी तकनीकी के माध्यम से शिक्षा पहुंचाई जा सके। खैर छोड़िये, हम अब भी किसी सरल व संभव नए तरीके को खोज में थे, ताकि बच्चों की शिक्षा बाधित न हो और ऐसे में एक विकल्प जो समझ में आ रहा था– बच्चों तक हर हफ्ते विषयवार नोट्स और वर्कशीट लेकर जाना और उनके काम का विश्लेषण करना। इसी के साथ–साथ संस्था के तौर पर हम कुछ जरूरतमंद बच्चों के परिवारों को राशन आदि देने का काम भी शुरू कर दिया था। एक बार के लिए मन में बात तो आती थी कि क्या ऐसे समय में समुदाय में जाना सही है? डर भी था कि ऐसे समय में जब बात खुद के साथ–साथ दूसरों के जीवन की हो। लेकिन इस बात की स्पष्टता थी कि सही जानकारी और आवश्यक सावधानियां रखने से हम खुद को सुरक्षित रख सकते है। इसके बाद हमने समुदाय में जाना शुरू किया।

ऑनलाइन से ऑफलाइन का सफर

इसके बाद हमने समुदाय में बच्चों के बीच जाना शुरू कर दिया। शुरुआती एक हफ्ते हमने बड़े बच्चों को कॉपियां, पेन्सिल और छोटे बच्चों को कलर–पेन्सिल दिए और आने वाले हफ्तों से हर हफ्ते के सोमवार को हर विषय के नोट्स देना शुरू किया। हम लोगों ने दो–दो के समूह में अलग–अलग क्षेत्रों में जाना शुरू किया और बच्चों से उनके घर के हाल–चाल और उनके काम का जायजा लिया। डर के साथ–साथ उत्साह भी था क्योंकि काफी समय बाद बच्चों से मिल रहे थे। उनके परिवार के सदस्य हमसे उसी अपनेपन के साथ मिलते और अपने घर का हालचाल बताते, बच्चों के बारे में बताते, अपने काम के बारे में बताते, बच्चों के भविष्य और अपने काम को लेकर अपनी चिंता जाहिर करते, और भी कई चीजें बताते जो उनके पास बताने को होता। कुछ परिवार शुरुआत के दिनों में अपनी पारिवारिक हालत के बारे में खुलकर बात करने में संकोच करते और कहते सब ठीक है सर!.. बच्चे अपने घर में घरवालों के सामने एकदम से दुबके से सीधे–साधे बच्चे की तरह गंभीर मुद्रा में खड़े रहते, वे ध्यान से बात सुनने और ठीक है सर, हां सर, ऐसे बोलते.. ऐसा लगता एक महीने में ये सब बदल गए, कहां गयी इनकी शरारतें, कहां गयी इनकी मस्ती। खैर हम उन्हें सहज करने और हंसाने की कोशिश करते। कई पैरेंट्स ने कहा, इस वक्त केवल आप ही हैं जो बच्चों की इस तरह से मदद कर रहे हैं, वरना दूसरे स्कूल तो बच्चों का हालचाल भी नहीं पूछते।" मुझे लगता है, ऐसे ही विकट समय में हमारी भूमिकाएं और जिम्मेदारियां अधिक महत्वपूर्ण हो जाती हैं, और दूसरों के साथ हमारे सम्बन्ध मजबूत बनाने में सहायक होती हैं। ऐसे समय में व्यक्तिगत तौर पर भी स्वयं की भूमिकाएं स्पष्ट करनी पड़ती हैं, स्वयं को आगे लाना पड़ता है। एक बात समझ में यह आई कि डर केवल तब तक हावी रहता है जब तक हम उसका सामना नहीं करते। यह ऐसा समय था जब हमने लगभग सभी बच्चों के घरों को अच्छे से जाना–समझा। इससे बच्चों के जीवन और संघर्षों को काफी पास से देखने का मौका मिला। बच्चों से उनके काम को लेकर उनसे बात करते, उनसे प्रश्न करते कि उन्होंने ऐसा क्यों लिखा? उन्हें ऐसा क्यों लगा? और क्या हो सकता है इत्यादि। बच्चों के काम के आधार पर हमने विषयों में बच्चों के स्तर के आधार पर उनके नोट्स और वर्कशीट बनाने का निर्णय किया। क्योंकि बच्चों के काम

और उनसे बातचीत के आधार पर एक बात समझ में आ रही थी कि एक ही प्रकार के नोट्स सभी स्तर के बच्चों के लिए उपयोगी सिद्ध नहीं हो सकते। इसके लिए कक्षानुसार बच्चों को चार स्तरों (level) में बांटा गया और उसी के आधार पर उनको काम दिया गया।

शिक्षक के रूप में बच्चे के परिवेश की समझ

बच्चों के बीच जाना महज केवल आदान–प्रदान की प्रक्रिया नहीं है, वरन बच्चों के साथ उनमें और उनके जीवन में शामिल होकर उनको करीब से जानना–समझना अधिक है। ये ऐसे दिन रहे जब मैं हर सुबह उठने पर सबसे अधिक उत्साहित रहता। सुबह सफर शुरू होता तो कोई सोमवार को बच्चे और उनके अभिभावक इंतजार करते। अभिभावक अपने घर और आस–पास खेती, बगीचा आदि दिखाते, उनके बारे में बातचीत करते, अपने काम को बताते कि कैसे उनकी दिनचर्या होती है। कई तो अपने घर की वस्तुओं को दिखाते जिन्हें उन्होंने बनाया था। कुछ अपनी संस्कृति को बताते कुछ अपने गांव या कुल का इतिहास साझा करते, कई अपने संघर्ष के दिनों को बताते, कुछ लोग इस बीच दुनिया खत्म होने को लेकर अपनी राय रखते... ऐसे कई अनुभव जो समुदाय से हमें मिलते वे हमारे हिस्से में जुड़ते जाते। हमने करीब से अपने बच्चों के घरों, उनके परिवार के संगठन आपसी मेल–जोल, उनके आस–पड़ोस, सम्बन्धों आदि को देखने– समझने का प्रयास किया। जैसे–जैसे समय बढ़ता हम उन वास्तविकताओं और जमीनी हकीकत के और करीब होते गए जिन हालातों और परिस्थितियों से बच्चा आता है। इससे हमें अपने काम और अन्य पहलुओं की कमियों के बारे में सोचने में मदद मिली जिन्हें हम अमूमन अपनी नियमित कक्षों में देखने में असफल रहे थे। जैसे कि बच्चा किस परिस्थिति से होकर आता है और उसके स्वयं के संघर्ष क्या है? साथ ही स्वयं की उन शिकायतों या सोच पर चिंतन करने का मौका मिला जिनमें हम अक्सर कहते हैं कि बच्चे काम ही नहीं करते हैं? उनके मम्मी–पापा ध्यान नहीं देते? ऐसे सवालों के जवाब शायद ही बच्चे के सामाजिक–सांस्कृतिक परिवेश और बच्चे को जाने–समझे बिना मिल पाए। हम हर दिन वापस आकर बात करते, बच्चों के लिए तैयार नोट्स को लेकर बात करते कि कैसे यह काम बच्चों के लिए आसान और जुड़ाव वाला हो सके जिससे इसे करने में बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित की जा सके। अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि जहां शुरुआती हफ्ते एक ही विषय के 10 पेज के नोट्स हुआ करते थे और कई तरह की खामियां रहती थी, बाद में वे दो से चार पन्नों के नोट्स ही रहे थे साथ ही स्तर अनुसार।

समुदाय कक्षा की शुरुआत

माह था सितम्बर का। कोविड के मामलों की संख्या की रफ्तार बढ़ने और कुछ अन्य कारणों के चलते कुछ समय के लिए सुमदाय में नोट्स के ऑफलाइन मोड को विराम देना पड़ा। यह वह समय था जब काम करने के लिए हमारे साथ शिक्षक कम पड़ रहे थे और स्थितियां भी ठीक नहीं थी। ऐसे में कुछ और नए तरीकों की जरूरत थी जिनके जरिये बच्चों की पढ़ाई सुचारू रूप से चल सके। खासकर उन बच्चों के बारे में जो अभी दसवीं में थे और दूसरा उन बच्चों के लिए जिनका पढ़ने–लिखने में कक्षा में स्तर कम है, जो स्वयं से काम करने में असफल है। इसके लिए एक विचार आया समुदाय में छोटे–छोटे समूहों में कक्षा चलाने का। इसके लिए अपने स्कूल के पूर्व बच्चे (ex-students) जो अभी ग्यारहवीं और बारहवीं में हैं उनकी मदद से बच्चों को पढ़ाने का। इस प्रकार हमने समुदाय में छोटे–छोटे समूहों के पांच से छह सेंटर अलग–अलग बच्चों के घर पर चुनाव कर शुरुआत की। शुरुआत में कक्षा दसवीं के बच्चों के लिए गणित और कक्षा छह के बच्चों के लिए भाषा और गणित को लेकर काम शुरू हुआ। देखते–देखते समुदाय में एक महीने के अन्दर 20 से 22 सेंटर हो गए और बच्चों की कुल संख्या 100 के आस–पास हो गयी। एक सेंटर पर कम से कम चार से पांच बच्चे होते। बच्चों के माता–पिता से बच्चों के पढ़ने जाने और ध्यान को लेकर बातचीत होती रहती और उनके सीखने का जायजा उनके मेंटर से लिया जाता। इस प्रकार, बड़े बच्चों ने दूसरे बच्चों के सीखने में निर्णायक भूमिका अदा की और यह अपने आप में एक अनूठी बात भी है कि स्वयं को दूसरों की सहायता के लिए निःस्वार्थ भाव से आगे लेकर आना।

(लेखक अज़ीम प्रेमजी स्कूल उधमसिंह नगर, उत्तराखण्ड से जुड़े हैं)